गोपाल प्रसाद सिन्हा

बनाम

बिहार राज्य

16 अक्टूबर, 1970

[एस. एम. सिकरी एवं आई. डी. दुआ, न्यायमूर्तिगण]

दंड प्रक्रिया संहिता (1898 का अधिनियम 5), एस. 403 - मुद्दा-विरोध-जब लागू हो।

अपीलकर्ता पर भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के तहत मुकदमा चलाया गया था, जिसमें उस पर 31 जनवरी, 1960 से 30 नवंबर, 1960 के बीच खजांची के रूप में कार्य करते हुए आपराधिक विश्वासघात का आरोप था। उससे पहले भी एक मामले में उस पर भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के तहत मुकदमा चलाया गया था, जिसमें उस पर 8 दिसंबर, 1960 से 17 अगस्त, 1961 के बीच आपराधिक विश्वासघात का आरोप था, एवं उस मामले में उसे बरी कर दिया गया था क्योंकि यह माना गया था कि वह नकदी का प्रभारी नहीं था। यह प्रश्न उठता है कि क्या उसे मुद्दा-विरोध के सिद्धांत के आधार पर बरी किया जाना चाहिए, क्योंकि यदि वह 8 दिसंबर, 1960 से 17 अगस्त, 1961 तक खजांची नहीं था, तो उसे 31 जनवरी, 1960 से 30 नवंबर, 1960 तक खजांची नहीं माना जा सकता।

अभिनिर्धारित: मुद्दा-विरोध के नियम का मूल सिद्धांत यह है कि तथ्य एवं कानून का वही मुद्दा पिछली कार्यवाही में निर्धारित किया गया हो, अर्थात् बाद का निष्कर्ष अनिवार्य रूप से पिछले निर्णय के विरोधाभास में होना चाहिए। हालांकि, वर्तमान मामले में, आरोपी को कभी भी खजांची के रूप में नियुक्त नहीं किया गया था, बल्कि वह एक अस्थायी वरिष्ठ लेखा लिपिक था जिस पर खजांची का काम करने का आरोप था। एक व्यक्ति एक अवधि में खजांची के रूप में कार्य कर सकता है एवं दूसरी अवधि में खजांची के रूप में कार्य नहीं कर सकता है। ऐसी परिस्थितियों में, जब अवधियाँ भिन्न होती हैं, तो ऐसा कोई विरोधाभास नहीं हो सकता है।

इसलिए, मुद्दा-विरोध का नियम मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है। [621 एच; 622 ए-सी]

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 212/1967

पटना उच्च न्यायालय के आपराधिक अपील संख्या 389/1965 में दिनांक 3 अगस्त, 1967 के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध विशेष अनुमति से अपील, साथ ही पटना उच्च न्यायालय के आपराधिक विविध संख्या 411/1969 में दिनांक 14 जुलाई, 1969 के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध विशेष अनुमति याचिका (आपराधिक) संख्या 1048/1969।

अपीलकर्ता की ओर से एस. एन. प्रसाद।

उत्तरदाता की ओर से बी. पी. झा।

न्यायालय का निर्णय **न्यायमूर्ति सिकरी** द्वारा सुनाया गया।

विशेष अनुमति से दायर इस अपील में मुद्दा-विरोध के नियम की प्रयोज्यता का प्रश्न उठाया गया है। अपीलकर्ता, गोपाल प्रसाद सिन्हा पर भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के तहत 31 जनवरी, 1960 एवं 30 नवंबर, 1960 के बीच लोक निर्माण विभाग, पूर्वी प्रभाग, गया में खजांची के रूप में कार्य करते हुए 27,800 रुपये के आपराधिक विश्वासघात का आरोप लगाया गया था। सहायक सत्र न्यायाधीश ने निर्धारण के लिए तीन बिंदु निर्धारित किए:

"1. यदि आरोपी गोपाल प्रसाद सिन्हा एक लोक सेवक था एवं 31-1-60 से 30-11-60 के बीच कार्यवाहक अभियंता, लोक निर्माण विभाग, गया पूर्वी प्रभाग के कार्यालय में खजांची के रूप में कार्यरत था?

2. क्या प्रभार राशि, अर्थात् 27,800 रुपये, अभियुक्त को सौंपी गई थी या लोक सेवक के रूप में उस पर उसका कोई अधिकार था?

3. क्या अभियुक्त ने इस प्रभार राशि के संबंध में आपराधिक विश्वासघात किया है?"

विद्वान सहायक सत्र न्यायाधीश ने मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों पर विचार करने के बाद पहले बिंदु का सकारात्मक उत्तर दिया एवं यह माना कि आरोपी उक्त अवधि के दौरान कार्यालय में खजांची के रूप में नकदी का प्रबंधन कर रहा था।

बिंदु संख्या 2 पर, विद्वान सहायक सत्र न्यायाधीश ने मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों पर विचार करने के बाद यह निर्णय दिया:

> "यह सिद्ध हो चुका है कि अभियुक्त के पास गया पूर्वी प्रभाग के लोक निर्माण विभाग के कार्यकारी अभियंता के कार्यालय में स्थित लोहे की पेटी के दरवाजे के एक ताले की एक चाबी थी। यह भी सिद्ध हो चुका है कि अभियुक्त प्रभाग के नकद का लेन-देन करता था एवं प्रभाग के धन का लेन-देन करता था। इसलिए मैं यह मानता हूँ कि प्रभार राशि अभियुक्त को सौंपी गई थी एवं गया पूर्वी प्रभाग के लोक निर्माण विभाग के खजांची के रूप में कार्य करते हुए अभियुक्त का 27,800 रुपये की प्रभार राशि पर पूर्ण स्वामित्व था।"

बिंदु संख्या 3 पर उन्होंने कहा कि "आरोपी ने रोकड़ बही में उप-विभाग संख्या 2 एवं 3 को प्रभार राशि के प्रेषण को दर्शाने वाली प्रविष्टियाँ कीं, लेकिन वास्तव में आरोपी द्वारा वह राशि प्रेषित नहीं की गई थी एवं न ही उप-विभाग संख्या 2 एवं 3 में प्राप्त हुई थी।"

उनके समक्ष मुद्दा-विरोध का मुद्दा उठाया गया, जिसमें यह कहा गया कि आरोपी पर पहले भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के तहत मुकदमा चलाया गया था, जिसमें उस पर 8 दिसंबर, 1960 से 17 अगस्त, 1961 की अवधि के दौरान कुछ राशियों के संबंध में आपराधिक विश्वासघात का आरोप था, एवं उस मामले में उच्च न्यायालय ने आरोपी को यह मानते हुए बरी कर दिया था कि वह नकदी का प्रभारी नहीं था। विद्वान सहायक सत्र न्यायाधीश ने माना कि उच्च न्यायालय का उपरोक्त निर्णय न्याय के विरुद्ध पूर्व निर्णय के रूप में लागू नहीं हो सकता।

इस मामले में अपील पर सुनवाई करते हुए उच्च न्यायालय ने विद्वान सहायक सत्र न्यायाधीश के तथ्यों के निष्कर्षों को बरकरार रखा। उच्च न्यायालय ने मुद्दा-विरोध के नियम से संबंधित तर्क को भी इस प्रकार खारिज कर दिया:

> "जिस पूर्ववर्ती मामले से आपराधिक अपील संख्या 40/1963 उत्पन्न हुई, उसमें आरोप लगाया गया था कि वर्तमान अपीलकर्ता ने 8-12-60 से 17-8-61 की अवधि के दौरान खजांची के रूप में गबन किया था। इस प्रकार, उस मामले में मुख्य मुद्दा यह था कि क्या आरोपी, अर्थात् वर्तमान अपीलकर्ता, उक्त अवधि के दौरान खजांची था एवं नकदी का प्रभारी था। हालांकि, वर्तमान मामले में, आरोप लगाया गया है कि गबन एक बिल्कुल अलग अवधि, अर्थात् 31-1-60 से 30-11-60 के दौरान किया गया था एवं वर्तमान मामले में मुख्य मुद्दा यह है कि क्या अपीलकर्ता इस विशेष अवधि के दौरान विभाग का खजांची था एवं नकदी का प्रभारी था। "उपर्युक्त अपील में दिए गए तथ्य के निष्कर्ष के अनुसार कि अपीलकर्ता खजांची नहीं था एवं न ही नकदी का प्रभारी था, यह निष्कर्ष 8-12-60 से 17-8-61 की अवधि के लिए प्रभावी माना जाना चाहिए, जिस दौरान उपर्युक्त अपील में उल्लिखित गबन कथित रूप से किए गए थे, एवं इस प्रकार, ये निष्कर्ष किसी भी तरह से मुद्दा-रोक के सिद्धांत के तहत अभियोजन पक्ष को बाद के मामले में, अर्थात् वर्तमान मामले में, यह दिखाने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने से नहीं रोक सकते कि अपीलकर्ता विभाग का खजांची था एवं 31-1-60 से 30-11-60 की अवधि के दौरान नकदी का प्रभारी था।"

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि मूल रूप से यह वही मुद्दा था जिस पर पहले के मुकदमे में विचार किया गया था, एवं यदि आरोपी 8 दिसंबर, 1960 से 17 अगस्त, 1961 तक खजांची नहीं था, तो उसे 31 जनवरी, 1960 से 30 नवंबर, 1960 तक खजांची नहीं

माना जा सकता। उन्होंने कहा कि दोनों मामलों में बचाव पक्ष की दलीलें एक जैसी थीं एवं साक्ष्य भी लगभग समान थे।

हमारी राय में, उच्च न्यायालय सही निष्कर्ष पर पहुंचा है। मुद्दा-विरोध के नियम का मूल सिद्धांत यह है कि तथ्य एवं कानून का वही मुद्दा पिछली मुकदमेबाजी में निर्धारित किया जाना चाहिए। तब प्रश्न उठता है: क्या यह वही तथ्य का मुद्दा था जो पिछले मामले में निर्धारित किया गया था? एक व्यक्ति एक अवधि में खजांची के रूप में कार्य कर रहा हो सकता है एवं दूसरी अवधि में खजांची के रूप में कार्य नहीं कर रहा हो सकता है, विशेष रूप से इस मामले में जैसा कि पाया गया कि अपीलकर्ता को कभी खजांची के रूप में नियुक्त नहीं किया गया था। वह एक अस्थायी वरिष्ठ लेखा क्लर्क था जिस पर खजांची का काम करने का आरोप लगाया गया था। यदि विचाराधीन दो अवधियों के दौरान तथ्यों या परिस्थितियों में परिवर्तन की कोई संभावना है, तो यह कहना मुश्किल है कि अभियोजन पक्ष समान तथ्य के मुद्दा पर पिछले मुकदमे के निष्कर्ष से बाध्य होगा। हमें लगता है कि बाद का निष्कर्ष अनिवार्य रूप से पिछले निर्णय के विपरीत होगा। यदि अवधियाँ भिन्न हैं एवं खजांची के कर्तव्यों के निर्वाह से संबंधित तथ्य भिन्न हैं, तो ऐसा कोई विरोधाभास नहीं हो सकता।

विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के कई मामलों का हवाला दिया है जहाँ मुद्दा-विरोध के नियम को अनुमोदित किया गया है; उदाहरण के लिए, प्रीतम सिंह बनाम पंजाब राज्य[1]; मणिपुर प्रशासन बनाम थोकचोम बीरा सिंह[2]; आंध्र प्रदेश राज्य बनाम कोक्किली-गड़ा मीरैया[3] ; एवं सहायक सीमा शुल्क समाहर्ता बनाम एल. आर. मालवानी[4], लेकिन ये मामले अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के तर्क का समर्थन नहीं करते हैं।

---

1 ए.आई.आर. 1956 एस.सी. 415

2 (1964) 7 एस.सी.आर. 123

3 [ए.आई.आर] 1970 एस.सी. 771

4 [ए.एल.आर.] 1970 एस.सी. 962

ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता ने 1 दिसंबर, 1961 को आत्मसमर्पण किया एवं सत्र परीक्षण संख्या 90/1962 में उसे पाँच वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई। उसने 15 नवंबर, 1962 से अपनी सजा काटना शुरू किया। उच्च न्यायालय में उसकी अपील 5 अक्टूबर, 1964 को स्वीकार कर ली गई एवं उसके बाद वह विचाराधीन कैदी के रूप में जेल में रहा। वर्तमान मामले में उसे छह वर्ष के सश्रम कारावास एवं 25,000 रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई गई है, अन्यथा जुर्माना न भरने पर 18 महीने का अतिरिक्त कारावास भुगतना होगा।

उपरोक्त परिस्थितियों में हम इस मामले में छह साल की सजा को अत्यधिक मानते हैं एवं इसे घटाकर तीन साल के कठोर कारावास एवं 25,000 रुपये के जुर्माने में बदल देते हैं, या जुर्माना न भरने पर 18 महीने के अतिरिक्त कारावास में बदल देते हैं।

परिणामस्वरूप, अपील को सजा के मामले में आंशिक रूप से स्वीकार किया जाता है, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है। तदनुसार, विशेष अनुमति याचिका (आपराधिक) संख्या 1048/1969 खारिज की जाती है।

वी.पी.एस. अपील की आंशिक रूप से अनुमति है।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।